REVIEW OF RESEARCH
IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF) UGC APPROVED JOURNAL NO. 48514 ISSN: 2249-894X
VOLUME - 8 | ISSUE - 7 | APRIL - 2019

मिथिला की राजनीतिक पृष्ठभूमि एवं कर्णाट कालीन इतिहास

डॉ. राकेश कुमार
बी० ए०, बी० लीस०, एम० ए०
पी–एच० डी०
पुस्तकालय अध्यक्ष, +2 हाई स्कूल, खिरहर.

भूमिका

वस्तुतः मिथिला के इतिहास में कर्णाट राजवंश की स्थापना एक नये युग का श्री गणेश करता है। मिथिला में कर्णाट राजवंश की स्थापना से पूर्व एक ऐसा अन्धकार का युग व्याप्त था कि मिथिला राजनीतिक रूप से दिशा विहिन हो चुका था। लेकिन मिथिला को स्वतंत्र राजनीतिक इकाई के रूप से प्रतिष्ठित होने का सुअवसर कर्णाट वंशीय शासन काल में प्राप्त हुआ। नान्यदेव के सिमराओं गढ़ राजधानी के खण्डर के प्रस्तर–स्तम्भ पर उत्कीर्ण श्लोकों का पता लगाया है, जिससे नान्य देव के सिंहासनारोहण के काल पर पूर्ण प्रकाश पड़ता है। सिमराओं अथवा शिवराम गढ़ के किले का निर्माण भूपति नान्यदेव ने स्वयं नेपाल और तिरहुत की सीमा के निकट–चम्पारण जिले के उत्तर पूर्वीय सीमा के सन्निकट किया था, जो सम्प्रति नेपाल राज्य के रोहतक जिले में पड़ता है। उक्त खण्डहर के निकटवर्ती रेलवे स्टेशन बिहार के राज्य के अन्दर से जाने वाली उत्तर–पूर्वीय रेलवे के दो हैं, – (1) छौड़ा दानो, तथा (2) घोड़शाहन। शोध–कुशल विद्वद्वर चन्दा झा ने कविवर विद्यापति के ग्रन्थ 'पुरूष परीक्षा' का सम्पादन किया था, जिसमें उन्होंने उक्त खण्डहर के प्रस्तर–स्तम्भ पर के उत्कीर्ण श्लोकों का उल्लेख किया है। सम्बद्ध मूल श्लोक निम्नांकित हैः–

'नन्देन्दु विन्दु विधु सम्मित शाक वर्षे सच्छावणे शितदले मुनि सिद्धि तिथ्याम् स्वा (ती) तौ शनैश्चर दिने करिवैरिलग्ने श्री नान्यदेव नृपतिर्व्ययधीत वासतुम्।' अर्थात् नृपति नान्यदेव ने शकाब्द 1019 (1097 ई0) श्रावण, सप्तमी, शुक्ल, शनिवार, स्वाती नक्षत्र में पृथ्वी को प्राप्त किया। सिलभ्यां लेवी के पाठ में पूर्वोक्त चन्दा झा के श्लोक–पाठ ससे किंचित् अन्तर दीखता है। उपर्युक्त उत्कीर्ण श्लोक स्पष्ट रूप से सिद्ध करता है कि नान्यदेव ने 1017 ई0 में मिथिला का राज्य–सिंहासन प्राप्त किया था। कुछ विद्वानों की राय इस तथ्य के विपरीत है। मनमोहन चक्रवर्ती की धारण के अनुसार नान्यदेव का तिरहुत राज्य–प्राप्ति–काल 14वीं शताब्दी थां उसके पूर्ण अवधि के मिथिला के इतिहास को उन्होंने तमसावृत्त बताया है। वे कह्लण द्वारा निर्दिष्ट शकाब्द 1019 (1017 ई0) नान्यदेव के सिंहासनारोहण काल, तथा नेपाल वेशावली में अंकितह उसके नेपाल की विजय की बात को अविश्वसनीय मानते है। सिलभ्यां लेवी के पाठ में पूर्वोक्त चन्दा झा के श्लोक–पाठ ससे किंचित् अन्तर दीखता है। उपर्युक्त उत्कीर्ण श्लोक स्पष्ट रूप से सिद्ध करता है कि नान्यदेव ने 1017 ई0 में मिथिला का राज्य–सिंहासन प्राप्त किया था। कुछ विद्वानों की राय इस तथ्य के विपरीत है। मनमोहन चक्रवर्ती की धारण के अनुसार नान्यदेव का तिरहुत राज्य–प्राप्ति–काल 14वीं शताब्दी थां उसके पूर्ण अवधि के मिथिला के इतिहास को उन्होंने तमसावृत्त बताया है। परन्तु चक्रवर्ती जी के तर्क के सिमराओं गढ़ से प्राप्त शिला–लेख ने समाप्त कर दिया है।

कर्णाटकालीन इतिहासः एक परिचय

नेपाली वेशावली में कर्णाट–कुल के तिरहुत के अन्तिम राजा हरिसिंह देव की नेपाल–विजय का काल 1324 ई0 अंकित किया गया है। नान्य के शासनारंभ तथा हरि सिंह देव के नेपाल–पलायन के बीच 226 वषो की चर्चा उसमें की गयी है। बीच में 219 वर्षो तक वहाँ नेपाल में ठाकुरियों का शासन था तथा उसके पश्चात् 7 वर्षो तक अराजकता का साम्राज्य। हिसाब लगाकर देखने सेक नान्यदेव की राज्य–प्राप्ति का काल मिथिला में प्रचलित अनुश्रुति के अति सन्निकट (13257–226–1098 ई0) पहुँच जाता है। 'नन्देन्दुविन्दु विधु सम्मित शाक वर्षे' के अंत में परिवर्त्तित करने में भ्रान्ति होने से नान्यदेव के शासनारंभ–काल के निश्चय करने में भुल होने की सम्भावना होती है छन्दशास्त्र के नियमानुसार कविता में 'अंकस्य वामा गतिः' होती है। इस प्रकार अंकों के मिलने पर (विधु–1, विन्दु–0, इन्दु–1, नन्द–9) 1019 शकाब्द होता हैं शकाब्द 1019 ई. बनता है। यही काल नान्यदेव के तिरहुत की राज्य–प्राप्ति का है। किन्तु जब दाहिने से बायँ अंकों के न बैठा कर उसके प्रतिकूल बायें से दाहिना लाते हैं तो प्राप्तांक भ्रामक हो जाता हैं वैसी स्थिति में हिसाब लगाने पर (नन्देन्दु–9, बिन्दु–0, तथा विधु–1) 901 शकाब्द आता है जो पिंजल–शास्त्र के नियमानुसार ठीक नहीं है। नान्यदेव के सिंहासनारोहण के समय–निर्धारण में नेपाल–वेशावली के अतिरिक्त 'मुदित कुवलयाश्व' नामक नाटक भी सहायक सिद्ध हुआ है। पुस्तक का प्रणयन 1928 ई0 हुआ था, तथा इसके लेखक थे नेपाल के भटगांओं के भूपाल जग–ज्यातिर–मल्ल, जो हरि सिंह देव के वंशज माने जाते हैं। उन्होंने उस नाटक में उक्त तिथि के विषय में अंकन किया हैं– 'नवेन्खु–चन्द्रयुक्तो शाके' आदि। हिसाब बैठाने पर यह काल 18 जुलाई, 1097 ई0 होता है, तथा उस तिथि में शनिवार एवं स्वत नक्षत्रा भी पड़ता है। नान्यदेव रचित 'भारत नाट्य शास्त्र' के भाष्य की पांडुलिपि का पता प्रो0 वेण्डल्ल ने लगाया था। उस ग्रन्थो से भी उपर्युक्त काल–निर्णय की सम्पुष्टि होता है पर पाठकों के ज्ञातृत्व एवं जिज्ञासु शोधकों के शोध के हेतु यहाँ यह अंकन करना आवश्यक प्रतीत होता है कि डा. के. सी. पाण्डेय ने इस विषय में एक नये रहस्य का उद्घाटन किया है। उनका कहना है कि अभिनवगुप्त ने नान्यदेव की चर्चा की है और उनके भाष्य के एक अंश को उद्धृत भी किया है अभिवगुप्त का वह लेखन 1014–15 ई0 का है। अतः नान्यदेव का काल उसके पूर्व होने चाहिये। इस विषय पर विशेष अनुसंधान की आवश्यकता है। कर्णाट कुलीय मिथिला के राजाओं में दो नान्यदेव का पता इतिहास नहीं देता है। नान्यदेव के शासनारंभ का काल 1097 ई0 प्राप्त विश्वसनीय प्रमाणों के आधार पर निश्चित किया गया हैं अभिनवगुप्त के नान्यदेव के कोई दुसरा नान्यदेव मानता होगा, जिसका काल 1097 ई0 के पूर्व था। उसके समय निर्णय में भी भ्रान्ति हो सकती है। पर प्रमाणों के अभाव में इस विषय पर अभी निश्चयात्मक रूप से कुछ कहना संभव नहीं है। में दो नान्यदेव के अस्तित्व को अस्तित्व को स्वीकार कर लिया है। अतः विद्वानों की राय में अभिनवगुप्त का नान्यदेव तथा मिथिला में कर्णाट क्षत्रिय राजवंश का संस्थापक नान्यदेव, दोनों एक व्यक्ति प्रतीत नहीं होता है। भाष्य के उद्धरण के सम्बन्ध में खोज की आवयकता कि पश्चाद्वर्त्ती पुस्तक की चर्चा कहा कि रूप में और कैसे आयी? पुराने ग्रन्थों में प्रक्षिप्त अंश परवर्त्ती काल में प्रचुर मात्रा में मिलाये पाये जाते हैं। पर वास्तव में तथ्य क्या है, इसका निर्णय तो विदुष–समाज का अन्वेषण ही कर सकेगा।

नान्यदेव की मिथिला राज्य प्राप्ति के विषय में प्रचलित अनुश्रुति एवं उसकी विवेचना नान्यदेव के मिथिला में आगमन तथा वहाँ के राज्य की प्राप्ति के विषय में प्रचलित अनुश्रुतियों के मिथिला के विद्वानों ने अपने प्रणीत ग्रन्थों में प्रायः स्थान दिया है, जिनका ऐतिहासिक महत्त्व विचार करने पर प्राचीन कहानियों और गल्पों से अधिक नहीं ज्ञात होता है।

उन अनुश्रुतियों के अनुसार पूर्व काल में नान्यदेव दक्षिण के नोलगिरि अंचल में शासन करता था। उसी काल में महमूद गजनबी का आक्रमण दक्षिण पर हुआ था। मुसलमानों का आक्रमण, उनके निर्दयतापूर्ण अत्याचार तथा लूट–मार से ऊब का नान्यदेव ने अपने दक्षिण के राज्य का परित्याग किया, तथा अपने परिवार, सम्बन्धियों, राजकीय कर्मचारियों, सैनिक पदाधिकारियों एवं प्रजा–वर्ग के साथ वह पाटलिपुत्रा पहुँचा वह वहाँ से चलकर मुजफ्फरपुर जिले के सीतामढ़ी अनुमंडल में नानपुर परगना के ग्राम कोइली (पुपरी के निकट) में आया। उसने वहाँ दल–बल के साथ अपना शिविर स्थापित किया। वहाँ अपने शिविर के सामने एक दिन उसने एक सर्प को देखा, जिसके फण पर कुछ लिखा था। नान्यदेव स्वयं फणि पर अंकित वाक्यों को बढ़ने में असमर्थ रहा। अतः रहस्यों उद्घाटन के हेतु उसने एक स्थानीय पण्डित का आह्वान किया। उस पण्डित ने आकर उस

नाग के मस्तक पर के लेख को पढ़ा तथा नान्यदेव के बताया कि निम्नलिखित श्लोक पर विषधर के फण पर अंकित है:–

''रामो बेत्ति नलो वेत्ति राजा पुरूरवा।
अलर्कस्य धनं प्राप्य नान्यो राजा भविष्यति।।''

उक्त पण्डित ने उस श्लोक का अर्थ समझा कर नान्यदेव को बताया, कि उसे (नान्यदेव को) वहाँ अलर्क का सुरक्षित अपार धन प्राप्त होगा, और उसके द्वारा वह मिथिला का भूपति होगा, जिसका साक्षी राम, नल पुरूरवा है। उसके पश्चात् सबों को देखते–देखते वह आश्चर्यमय सर्प अन्तदार्थ हो गया। नान्यदेव ने तदनुसार पृथ्वी खोदकर निर्देशित सम्पति प्राप्ती एवं मिथिला में राज्य की स्थापना भी की। नान्यदेव के प्रथम निवास होने के कारण उस गाँव का नाम नान्यपुर अथवा नानपुर पड़ा। लोग उसे कोइल नानपुर कहते है। पीछे चलकर मंडल विभागों की सृष्टि होने पर उसे अंचल के परगने का नाम भी नान्यपुर अथवा नानपुर पड़ा जो अद्यपर्यन्त उसी नाम से पुकारा जाता हैं तथा शासकीय कार्यालयों में भी वही नाम अंकित है।

पूर्व अध्ययनों की समीक्षा

पूर्व में इसका उल्लेख किया जा चुका है कि नान्यदेव तथा उसके पूर्वज गण आरंभ में किसी अधिराट के सामंत नृपति थे। नान्य के द्वारा 'प्रवीण भाष्य' में अंकित उसके विरूद्ध 'श्रीमहा समांताधिपति श्री मन्नान्यपति' से भी उपयुक्त कथन का समर्थन होता है। श्रीधर ने भी अन्हराठाढ़ी अभिलेख में उसके नाम के पूर्व 'श्रीमान' विशेषण का प्रयोग किया है। इससे भी यह स्पष्ट होता है कि नान्यदेव पहले वहां किसी सम्राट का प्रतिनिधि शासक अथवा सामंत था। पीछे वह अपनी स्वतंत्रता घोषित कर सार्वभौम सत्तधारी राजा बन गया। नान्यदेव के भाष्य ग्रन्थ 'भारत नाट्यशास्त्रा' के अध्यायों के अंत में लेखक का परिचय जहां अंकित किया गया है वहां जिन विरोधों का उसने अपने लिए प्रयोग किया है उनका उल्लेख पूर्व में किया जा चुका है। पुस्तक के बीच–बीच में भी जहां–तहां लेखक ने अपने विरूद्धों का अंकन किया है। और वे यह ''कर्णाट–कुल–भूषण'' 'मिथिलेश्वर' 'धर्माधार भूपति' 'राजा राजनारायण' 'मोहन मुरारी' नृपमल्ल' एवं 'प्रत्यग्रवाणीपति'। अध्यायों के अंत में तथा पुस्तक के मध्य में उल्लिखित उस भूपति के विरूद्धों से अनुमान किया जाता है कि उसने अपने प्रारंभिक तथा पीछे के जीवन में क्रमशः दो रूप में शासन किया था। प्रारंभिक जीवन में वह किसी अधिराट का 'सामन्ताधिपति' था, पर पीछे चलकर वह स्वतंत्र नृपति बन गया। संभवतः कर्णाट कुलीय चालूक्य सम्राट सोमश्वर प्रथम, विक्रमादित्य षष्ट तथा सोमेश्वर तृतीय की ओर से 'महासामंताधिपति' के रूप में नान्यदेव आरंभ में शासन करता था। 'भारतनाट्यशास्त्र' की रचना का आरंभ संभवतः उसी काल में हुआ था इसीलिए उसने अपने के 'महासामंताधिपति' के रूप में पुस्तक के कई अध्यायों में अपना परिचय दिया है पर ग्रंथ का प्रणयन पुरा करने के पूर्व उसने अपने राष्ट्र से संबंध विच्छेद कर अपने के पूर्ण स्वतंत्र कर लिया था, ऐसा अनुमान किया जाता है। इसी कारण अपने स्वतंत्रता प्राप्त कर लेने पर अपने लिए 'मिथिलेश्वर', 'राजनारायण', 'नृपमल्ल', 'धर्माधार भूपति', कर्णाट कुल भूषण आदि विरूद्धों का प्रयोग अपनी पुस्तक में पीछे चलकर किया है।

नान्यदेव ने अपने 'महासामंताधिपति' विरूद्ध का परित्याग मिथिला के स्वतंत्र भूप हो जाने पर हो जाने पर भी नहीं किया। हो सकता है कि पूर्ण स्वतंत्राता प्राप्त करने पर भी अपने पूर्व के सम्राटों के वंशजों की नाम मात्र ही प्रभूसत्ता को वह स्वीकार करता रहा हो। भारतीय इतिहास इसका प्रमाण देता है कि अधिराट शक्ति के ह्रास होने पर कई सामंतों ने स्वतंत्रा होकर भी अपने को अधिराट अथवा भूपति घोषित नहीं किया। नेपाल के राजा अंशुवर्मन तथा मौर्यवंश के अंतिम राजा के सेनापति पुष्यमित्र ने भी वैसा ही किया था। पुष्यमित्रा भरद्वाज गोत्रिाय ब्राह्मण शुंग राजवंश का संस्थापक था। वह मौर्य कुल के अंतिम राजा वृहद्रथ का सेनापति था। उसके सम्राट की सारी सेना के सामने तीक्ष्ण बाणों से मौर्यराट का वध कर मगध के राज्य सिंहासन पर अधिकार कर लिया था। सम्राट पद की प्राप्ति के पश्चात भी है अपने को 'सेनापति' ही कहा करता था। ऐसा प्रायः जन–समुदाय के भूलावा देने के लिए किया जाता था, इसको स्वीकार करना अनुचित न होगा। नान्यदेव ने भी इन्हीं कारणों से 'महासामंताधिपति' के विरूद्ध का परित्याग भूपति पद प्राप्ति–पश्चात भी नहीं किया, यद्यपि

उसने मिथिला का सार्वभौम स्वतंत्र भूपति 1097 ई में अपने को घोषित कर अपने अधिराट से राजनीतिक संबंध सर्वथा विच्छेद कर लिया था।

नान्यदेव का एक अन्य नाम नान्युपदेव भी था। जिस काल में उसने मिथिला में अपने लिए स्वतंत्र राज्य की स्थापना की थी, उसी समय के लगभग उत्तर भारत के अन्य अंशों में भी राजनीतिक उथल–पुथल हुई थी, इसकी चर्चा पूर्व में की जा चुकी है। अनन्त वर्मन चोड़ गंग के नेतृत्व में उड़ीसा में 1118 ई0 में गंग–राज्य की, सामन्त सेन अथवा उसके प्रतापी पुत्र विजय सेन के नायकत्व में ग्यारहवीं शती के मध्य के लगभग बंगाल में सेन–राज्य की, तथा चन्द्रदेव गहडवाल के द्वारा काशी–कन्नौज राज्य की महोदयश्री में स्थापना भी उसी काल के आस–पास हुई। इस चारों राज्यों में मिथिला राज्य सबसे छोटा था। सभी नव–स्थापित राज्य अपने आधिपत्य एवं अधिकार के विस्तार के हेतु अपने–अपने पड़ोसी राज्यों के साथ संघर्ष में लीन थे। मिथिला की सीमाओं पर नेपाल राज्य, बंगाल राज्य, दक्षिण बिहार का पाल–राज्य तथा काशी–कन्नौज का गहडवाल राज्य चारों ओर से उसे घेरे थे। डाहल (त्रिपुरी) के कलचुरि क्षत्रियों का आधिपत्य पूर्व में मिथिला पर था। उसका राज्य उस काल में भी दक्षिण–पश्चिम बिहार तथा काशी तक फैला हुआ था।

निष्कर्ष

स्थानीय अनुश्रुतियों के अनुसार नान्यदेव ने चम्पारण में भी अपने नाम पर 1017 ई0 में नान्यपुर अथवा नान्यपुरा अथवा नन्हापुर नगर बसाकर शासन की सुविधा हेतु वहां अपनी दूसरी राजधानी बनायी थी। वहाँ के विशाल राजभवन का भग्नावशेष खण्डहर अब भी विद्यमान है। राजमहल के प्रवेश–द्वार (सिंह द्वार) पर वहीं सिमराओं दुर्ग से प्राप्त प्रस्तर–स्तम्भ पर उत्कीर्ण–नन्देन्दु बिन्दु विधु अभिलेख उत्कीर्ण हैं उस खण्डहर के स्थानीय जनता अतिश्रद्धा एवं आदर की दृष्टि से देखती है। सम्भवतः यशःकर्ण का आक्रमण चम्पारण स्थित नान्यदेव की उक्त राजधानी के विरूद्ध हुआ था, जिस पर आधिपत्य स्थापित करने में वह सक्षम न हो सका।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. चन्द झाः पुरूष परीक्षा, दरभंगा संस्करण, पृ0 19
2. ली नेपाल, 2, पृ0 194
3. जरनल ऑफ द एशिएटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल, न्यू सीरीज, 1914, पृ0 407
4. इण्डियन ऐन्टीक्वेरी, 9, 188
5. जरनल ऑफ दि एशिएटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल, न्यू सीरीज, 1914, पृ0 409
6. डा० उपेन्द्र ठाकुरः ऑफ मिथिला, पृ0 235; जरनल ऑफ दि बिहार ऐण्ड उड़ीसा रिसर्च सोसाइटी, 9, 305
7. अभिनवगुप्तः ए हिस्टोरिकल ऐण्ड फिलॉसाफिकल स्टडी, पृ0121–23द्ध डा० उपेन्द्र ठाकुरः हिस्ट्री ऑफ मिथिला, पाद टिप्पणी, पृ0 236
8. आर० सी० मजूमदार ने भी हिस्ट्री ऑफ बंगाल', वॉल्यूम–1, 212